वैदिक व्याख्यान माला — ३९ वाँ व्याख्यान

रुद्र देवताका परिचय

लेखक

पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

साहित्य-वाचस्पति, वेदाचार्य, गीतालंकार

अध्यक्ष- स्वाध्याय मंडल

स्वाध्याय मंडल, पारडी

३७ नये पैसे

रुद्रदेवताका परिचय

'रुद्र' के विषयमें निरुक्तका मत।

'**निघण्टु**' नामक वैदिक कोश में अ० ३।१६ में '**स्तोतृनामों**' में '**रुद्र**' शब्दका निर्देश किया गया है। इससे '**रुद्र**' शब्दका '**स्तोता**' स्तुति करनेवाला, ऐसा अर्थ निघण्टुकार के मतसे है। इसलिये निघण्टुकारके मतानुसार '**रुद्र**' शब्द मनुष्यवाचक ही प्रतीत होता है। परंतु निरुक्तकार यास्काचार्यने इस '**रुद्र**' देवताका परिगणन मध्यस्थानीय देवगण (निरु० अ० १०।१) में किया है।

अथातो मध्यस्थाना देवताः ॥ १ ॥ रुद्रो रौतीति सतः रोरूयमाणो द्रवतीति वा, रोदयतेर्वा, 'यदरुदत्तद्रुद्रस्य रुद्रत्वम्' इति काठकम् 'यदरोदीत्तद्रुद्रस्य रुद्रत्वम्' इति हारिद्रविकम् ॥

(निरुक्त, दैवतकाण्ड १०।१।१-६)

"अब मध्यम स्थान अर्थात् अन्तरिक्ष स्थानके देवोंका विचार करना है। 'रु' अर्थात् शब्द करना, इस अर्थका यह शब्द है, किंवा शब्द करता हुआ पिघलता है, ऐसा इसका अर्थ है। रोनेके कारण इसको रुद्र कहा है, ऐसा काठक और हरिद्रविक शाखा संप्रदायवालोंका मत है।" अर्थात् 'रुद्र' देवता अन्तरिक्षमें है। मेघोंमें रहकर यह गर्जनारूप शब्द करता है, और गर्जना करता हुआ, मेघोंको द्रवरूप बनाकर वृष्टि कराता है। **काठक और हारिद्रविक** शाखा-संप्रदाय-वालोंका मत ऐतिहासिक है; देखिए—

(१) स किल पितरं प्रजापतिमिषुणा विध्यन्तमनुशोचन्नरुदत् तद्रुद्रस्य रुद्रत्वम् ॥

(२) यदरोदीत्तद्रुद्रस्य रुद्रत्वम् ॥

(नि० भाष्य १०।१।६)

"वह रुद्र अपने प्रजापति पिताको बाणसे विद्ध करता हुआ देखकर रोया, इसलिये उसका नाम रुद्र हुआ।" यह मत ऐतिहासिकोंका है। तथा—

एक एव रुद्रोऽवतस्थे न द्वितीयः।
असंख्याताः सहस्राणि ये रुद्रा अधिभूम्याम्।
.....इति ॥ (नि० १।१३)

"एक मंत्र कहता है कि '**एक ही रुद्र है, वह अ-द्वितीय है।**' परन्तु दूसरे मंत्रमें कहा है कि '**पृथ्वीमें असंख्य और हजारों रुद्र हैं।**'

इस विषय में निरुक्तकार कहते हैं—

तासां महाभाग्यादेकैकस्या अपि बहूनि नामधेयानि भवन्ति ॥ १ ॥.....तत्र संस्थानैकत्वं संभोगैकत्वं चोपेक्षितव्यम् । ..... ॥
तत्रैतन्नरराष्ट्रमिव ॥ ५ ॥ (नि० दै. ७।२।५)

"उन देवताओंमें एक-एक देवताका महत्त्व विशेष होनेके कारण एक-एक देवताके अनेक नाम होते हैं।.....परंतु उनका स्थानसे और भोगसे एकत्व देखना चाहिए। ..... जैसा मनुष्योंका राष्ट्र।"

अर्थात् एकएक देवताके विशेष गुणोंके कारण अनेक नाम हुआ करते हैं। नाम अनेक होनेपर भी भिन्न देवता नहीं होते हैं। अनेक शब्दोंसे एक ही देवताका बोध होता है। ..... क्योंकि उनके स्थान और भोगकी एकता देखकर उनकी विविधतामें एकता देखनी चाहिए। ..... जैसा राष्ट्रमें रंग-रूप-जातिके कारण अनेक प्रकारके लोग होनेपर भी उन सबमें एक राष्ट्रीयत्व होता है, उसी प्रकार अनेक देवताओंके 'स्थानके और भोगके एकत्व' के कारण उन अनेकोंमें एकत्व मानना उचित है।

इसलिये यद्यपि किसी मंत्रमें '**एक ही रुद्र है**' ऐसा वचन आया अथवा दूसरे किसी मंत्रमें '**हजारों रुद्र हैं**' ऐसा विधान

आगया, तथापि इतनेसे ही उनमें भेद है, ऐसा नहीं सिद्ध होता। यह उक्त निरुक्तवचनोंका तात्पर्य है।

निरुक्तकार और क्या क्या कहते हैं, यह पहिले यहां देखेंगे और पश्चात् अन्य मतोंका विचार करेंगे—

अग्निरपि रुद्र उच्यते ॥ (नि. १०।७।२)

" अग्निको भी रुद्र कहते हैं। " इस प्रकार ' रुद्र ' शब्दका ' अग्नि ' ऐसा अर्थ यहां निरुक्तकारने दिया है।

' रुद्र ' शब्दका ' परमात्मा, परमेश्वर ' ऐसा अर्थ स्पष्टतापूर्वक यद्यपि निरुक्तकारने नहीं दिया, तथापि ' एक ही देवताके अनेक नाम देवताके महत्त्वके कारण हुआ करते हैं। ' ऐसा कहकर सूचित किया है कि परमात्माके अनेक नामोंमें ' रुद्र ' भी एक नाम है; अर्थात् ' रुद्र ' शब्दका परमेश्वरपर अर्थ भी हो सकता है।

स्थानके एकत्वके कारण, भिन्न वर्णन होने पर भी, एकत्वकी कल्पना करनेकी सूचना निरुक्तकार यास्काचार्य पूर्वोक्त वचनमें देते हैं। सर्वव्यापक परमात्मा जैसा पृथ्वीपर है, वैसा ही अन्तरिक्षमें और ऊपर द्युलोकमें भी व्यापक होनेसे उसका स्थान सर्वत्र है; इसलिये सब स्थानके देवताओंके सब शब्द उस एक अद्वितीय महा देवताके वाचक हो सकते हैं। इस तर्कशास्त्रसे हम निरुक्तकारका भाव जान सकते हैं। यही भाव श्वेताश्वतर उपनिषद्में बिलकुल स्पष्ट है। देखिए—

रुद्रके विषयमें उपनिषत्कारोंकी संमति।

श्वेताश्वतर उपनिषद्में ' एक रुद्र है, ' इस विषयमें निम्न मंत्र आया है—

एको ह रुद्रो न द्वितीयाय तस्थुर्य इमांल्लोकानीशत ईशनीभिः। प्रत्यङ् जनास्तिष्ठति संचुकोचान्तकाले संसृज्य विश्वा भुवनानि गोपाः ॥ २ ॥ (श्वे. उ. ३।२)

यही मंत्र निरुक्तभाष्यकारने निम्न प्रकार दिया है—

एक एव रुद्रोऽवतस्थे न द्वितीयो रणे निघ्नन् पृतनासु शत्रून् ॥ संसृज्य विश्वा भुवनानि गोप्ता प्रत्यङ् जनान्संचुकोचान्तकाले ॥

(नि. १।१४ दुर्गाचार्यटीका)

एक एव रुद्रो न द्वितीयाय तस्थे ॥ (तै. सं. १।८।६।१)

" एक ही रुद्र है, दूसरा रुद्र नहीं है। वह शत्रुओंको युद्धमें पराजित करता है। सब भुवनोंको उत्पन्न करके, उस सब विश्वका संरक्षण करता है और अन्तकालमें सबका संकोच (प्रलय) करता है। "

ऊपर दिये हुए श्वेताश्वतर मंत्रका अर्थ—" एक ही रुद्र है, वह किसी दूसरेकी सहायताकी अपेक्षा नहीं करता। वह अपनी शक्तियोंसे इन सब लोकोंको स्वाधीन रखता है। और प्रत्येक मनुष्यके अन्दर रहता है। यह संरक्षक प्रभु सब विश्वको उत्पन्न करने और पालन करनेके पश्चात् अन्तकालमें सबको संकुचित करता है। " तथा—

एको रुद्रो न द्वितीयाय तस्मै य इमांल्लोकानीशत ईशनीभिः ॥ (अथर्व-शिर. ५)

रुद्रमेकत्वमाहुः शाश्वतं वै पुराणम् ॥ अथर्व-शिर. ५

यो अग्नौ रुद्रो यो अप्स्वन्तर्य ओषधीर्वीरुध आविवेश। य इमा विश्वा भुवनानि चक्लृपे तस्मै रुद्राय नमोऽस्त्वग्नये ॥ (अथर्व-शिर. ६)

" एक ही रुद्र है। वह किसी दूसरेकी सहायता नहीं चाहता। जो इन सब लोक-लोकान्तरोंको अपनी शक्तियों द्वारा स्वाधीन रखता है। ' रुद्र ' एक ही है ऐसा कहते हैं। वह शाश्वत और प्राचीन है। " " जो रुद्र अग्नि, जल, ओषधी, वनस्पति, आदिमें व्यापक है और जो इन सब भुवनोंको बनाता है, उस एक अद्वितीय तेजस्वी रुद्रके लिये नमस्कार है। " तथा—

यो देवानां प्रभवश्चोद्भवश्च विश्वाधिपो रुद्रो महर्षिः ॥ हिरण्यगर्भं जनयामास पूर्वं स नो बुद्ध्या शुभया संयुनक्तु ॥ ४ ॥ (श्वेता. उ. ३।४)

यो देवानां प्रभवश्चोद्भवश्च विश्वाधिपो रुद्रो महर्षिः ॥ हिरण्यगर्भं पश्यति जायमानं स नो बुद्ध्या शुभया संयुनक्तु ॥ १२ ॥ (श्वेता. उ. ४।१२)

" जो सब देवताओंको जन्म देता है, जो सर्व द्रष्टा और सब विश्वका अधिपति है, जिसने पहिले हिरण्यगर्भ को उत्पन्न किया था, वह एक प्रभु रुद्र हम सबको शुभ बुद्धि देवे। "

इस प्रकार ' **रुद्र** ' शब्दसे ' **एक परमात्मा** ' का बोध उपनिषदोंमें लिया है। इससे सिद्ध है कि ' रुद्र ' शब्द परमात्मवाचक है। यद्यपि इस समयका कोई कोशकार ' **रुद्र** ' शब्दका ' **परमात्मा** ' ऐसा अर्थ नहीं देता, तथापि कृष्णयजुर्वेदीय श्वेताश्वतर उपनिषद्के उक्त वचन द्वारा उस शब्दका परमात्मवाचक अर्थ निःसंदेह सिद्ध है।

रुद्रके एकत्वके विषयमें वेदकी संमति ।

' रुद्र ' के एकत्वके विषयमें निरुक्तकारने दिया हुआ मंत्र पूर्व स्थलमें दिया ही है । वह आजकल किसी संहितामें नहीं मिलता । इसलिये अनुमान है कि वह किसी अन्य शाखाग्रंथमें पठित होगा और निरुक्तकारके समय वह शाखाग्रंथ उपलब्ध होगा । रुद्रके एकत्वके विषयमें वेदमें ये वचन हैं—

स धाता स विधर्ता स वायुर्नभ उच्छ्रितम् । ... ॥३॥
सोऽर्यमा स वरुणः स रुद्रः स महादेवः । ... ॥४॥
तमिदं निगतं सहः स एष एक एकवृदेक एव ॥१२॥
एते अस्मिन्देवा एकवृतो भवन्ति ॥१३॥(अथर्व.१३।४।२)

" वह ही धाता, विधाता, वायु, अर्यमा, वरुण, रुद्र और महादेव है । उसीसे यह आकाश ऊपर हुआ है, यह सब महान् शक्ति उसी में है । वह एक ही है । वह एक सर्वत्र व्यापता है । वह निश्चयसे एक है । सब देव उसमें एक जैसे होते हैं । " इसमें बताया है कि एक सर्वव्यापक सर्वाधार आत्मतत्त्वका नाम भी रुद्र है ।

सर्वव्यापक रुद्रदेव ।

एक ही रुद्र सर्वत्र व्यापक है, इस आशयको निम्न मंत्र प्रकट कर रहा है--

यो अग्नौ रुद्रो यो अप्स्वन्तर्य ओषधीर्वीरुध आविवेश । य इमा विश्वा भुवनानि चाक्लृपे तस्मै रुद्राय नमोस्त्वग्नये ॥ (अथर्व० ७।९२।१)

" जो एक रुद्र देव अग्नि, जल, औषधि, वनस्पति आदि पदार्थोंमें व्याप्त है और जो सब भुवनोंको (चक्लृपे) बना सकता है, उस (अग्नये रुद्राय) एक तेजस्वी रुद्रदेवके लिये नमन है । "

यह मंत्र बिलकुल स्पष्ट है और इससे रुद्रदेवकी सर्वव्यापकता सिद्ध होती है । जगत् की रचना करनेवाला, सब पदार्थोंमें व्यापक और सबका उपास्य जो देव है, उसीका उल्लेख यहां ' रुद्र ' नामसे किया है । रुद्र शब्दके एकवचन होनेके कारण वह एक ही है, ऐसा सिद्ध होता है । तथा सर्वव्यापक जो होता है, वह एक ही हो सकता है । इससे भी उसका एकत्व सिद्ध हो सकता है । रुद्रदेवका ही सब कुछ है, ऐसा अथर्ववेदीय रुद्रसूक्तके निम्न मंत्रमें कहा है—

तव चतस्रः प्रदिशस्तव द्यौस्तव पृथिवी तवेदमुर्वोरन्तरिक्षम् । तवेदं सर्वमात्मन्वद् यत्प्राणत् पृथिवीमनु ॥ १० ॥ (अथर्व. ११।२।१०)

" हे रुद्र ! इन चार दिशाओंमें तथा द्युलोक, पृथ्वी और इस बडे अन्तरिक्षमें जो कुछ है, वह सब तेरा ही है । जो कुछ (आत्मन्-वत्) आत्मायुक्त अर्थात् प्राण धारण करनेवाला है, जो इस पृथ्वीपर जीवनरूपसे रहता है, वह सब तेरा ही है । "

इस तरह ' रुद्र ' का सामर्थ्य और प्रभुत्व चारों ओर सब दिशा विदिशाओंमें है, ऐसा वर्णन इस मंत्रमें है । इससे सिद्ध होता है कि उस जगन्नियन्ता परमात्माका ही यह ' **रुद्र** ' नाम है ।

केवल इतने ही प्रमाणोंसे ' परमात्मा ' वाचक ' रुद्र ' शब्द है, ऐसा सिद्ध होगा । तथापि परमात्माके अनेक गुण वेदमंत्रों द्वारा ' रुद्र ' के साथ मिलते हैं वा नहीं, यह हम अब देखते हैं—

जगत् का पिता रुद्र ।

' **पिता** ' का अर्थ ' रक्षक और अपने वीर्य द्वारा जन्म देनेवाला ' ऐसा होता है । ' रुद्र ' सब भुवनोंका पिता है, ऐसा निम्न मंत्रमें कहा है—

भुवनस्य पितरं गीर्भिराभी रुद्रं दिवा वर्धया रुद्रमक्तौ । बृहन्तमृष्वमजरं सुषुम्नमृधग्घुवेम कविनेषितासः ॥ (ऋ० ६।४९।१०)

" (दिवा अक्तौ) दिनमें और रात्रीमें (आभिः गीर्भिः) इन वचनोंके साथ (भुवनस्य पितरं) सब सृष्टिके पिता (रुद्रं रुद्रं) बलवान् रुद्र देवकी (वर्धय) बधाई करो । उनके महत्वकी प्रशंसा करो । उस (बृहन्तं) महान् (ऋष्वं) श्रेष्ठ ज्ञानी तथा (अ-जरं) जीर्ण अथवा क्षीण न होनेवाले और (सु-सुम्नं) अत्यंत उत्तम विचारशील, रुद्रदेवताकी, (कविना इषितासः) बुद्धिवानोंके साथ उन्नतिकी इच्छा करनेवाले हम सब (ऋधक् हुवेम) विशेष प्रकारसे उपासना करेंगे । "

इस मंत्रमें वह ' रुद्र ' देव ' महान्, ज्ञानी, अजर, अमर और सुविचारी ' है, ऐसा कहा है । ये उनके गुण परमात्माके गुणोंके साथ मिलनेवाले ही हैं, तथा ' **भुवनस्य पितरं रुद्रं** ' ये शब्द रुद्रदेवका वास्तविक स्वरूप बताते हैं । ' **सृष्टिका पिता रुद्र है** । ' जगत्का पिता जो अजर, अमर, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् है, वह परमात्माके सिवा दूसरा कौन हो सकता है ? इस प्रकार इस मंत्रका ' रुद्र ' देव उस अद्वितीय परमात्माका ही नाम है, ऐसा दीखता है । इस जगदीशका वर्णन निम्न मंत्रमें देखने योग्य है—

सब सृष्टिका स्वामी रुद्र ।

स्थिरेभिरंगैः पुरुरूप उग्रो बभ्रुः शुक्रेभिः पिपिशे हिरण्यैः । ईशानादस्य भुवनस्य भूरेर्न वा उ योषद्रुद्रादसुर्यम् ॥ (ऋ० २।३३।९)

" (स्थिरेभिः अंगैः) दृढ अवयवोंसे (पुरु-रूपः) अनेक पदार्थोंको आकार देनेवाला (उग्रः) महान् प्रबल और (बभ्रुः) तेजस्वी रुद्र (शुक्रेभिः हिरण्यैः) शुद्ध तेजोंके साथ (पिपिशे) शोभता है। (अस्य भुवनस्य) इस सब सृष्टिके (भूरेः ईशानात् रुद्रात्) महान् स्वामी रुद्रदेवसे (असु-र्यं) उसकी महान् जीवनशक्ति (न वा उ योषत्) कभी पृथक् नहीं होती। "

यह ' रुद्र ' देव जगत्को निर्माण करके सब पदार्थोंको रंग, रूप और आकार देता है। वह अत्यंत तेजस्वी और सर्वशक्तिमान् है। अपने ही विविध तेजोंसे और पवित्रताओंके कारण वह शोभायमान हो रहा है। वह सब जगतका ईश्वर है और उससे उसकी शक्ति कभी पृथक् नहीं होती। यह मंत्र ' रुद्र ' देवताके सब शंकाओंको दूर कर सकता है। **' भुवनस्य ईशानात् रुद्रात् असुर्यं न योषत्। '** जगत् के स्वामी रुद्रदेवसे उसकी दिव्य शक्ति कभी पृथक् नहीं होती। इस वाक्यसे रुद्र देवताके वास्तविक मूल स्वरूपका पता लग सकता है।

भुवनस्य पिता रुद्रः ॥ (ऋ० ६।४९।१०)
भुवनस्य ईशानः रुद्रः ॥ (ऋ० २।३३।९)

उक्त दो मंत्रोंके ये दो वाक्य एक ही आशयको बतानेवाले हैं, इसका यदि पाठक विचार करेंगे, तो वेदमंत्रोंके शब्दोंकी विशेष योजनाका पता लग सकता है। यह वाक्य यदृच्छासे नहीं बने हैं, विशेष हेतुपूर्वक ही यह शब्दप्रयोग हुआ है, ऐसा प्रतीत होता है। इससे अगला मंत्र यहां अब देखिए—

सर्वशक्तिमान् रुद्र।

अर्हन् बिभर्षि सायकानि धन्वार्हन्निष्कं यजतं विश्वरूपम्। अर्हन्निदं दयसे विश्वमभ्वं न वा ओजीयो रुद्र त्वदस्ति ॥ (ऋ० २।३३।१०)

" (अर्हन्) योग्य होनेके कारण रुद्र सब शस्त्रास्त्रोंको धारण करता है। रुद्र योग्य होनेके कारण सब विश्वको रूप और तेज देता है। योग्य होनेके कारण ही इस (अभ्वं विश्वं) महान् विश्व पर (दयसे) दया करके उस सबका संरक्षण करता है। हे रुद्र! (त्वत्) तेरेसे कोई भी अधिक (ओजीयः) बलवान् (न वा अस्ति) नहीं है। "

इस मंत्रमें **' त्वत् ओजीयो न वा अस्ति '** तेरेसे अधिक शक्तिशाली कोई भी नहीं है, अर्थात् तू ही सबसे अधिक बलवान् है। इससे सर्वशक्तिमान् रुद्रदेव परमात्मा ही है, ऐसा दिखाई दे रहा है। अब निम्न लिखित मंत्र देखिए। इसमें रुद्रदेव सब जनताका राजा है, ऐसा कहा है—

गुहा-निवासी रुद्र।

स्तुहि श्रुतं गर्तसदं जनानां राजानं भीममुपहत्नुमुग्रम्। मृडा जरित्रे रुद्र स्तवानो अन्यमस्मत्ते नि वपन्तु सेन्यम् ॥ (अथर्व० १८।१।४०)

" (उग्रं भीमं) उग्र और शक्तिमान्, (उप-हत्नुं) प्रलयकर्ता, (श्रुतं) ज्ञानी, (गर्त-सदं) सबके अन्दर रहनेवाला, (जनानां राजानं) सब लोकोंका राजा रुद्र है, उसकी (स्तुहि) स्तुति करो। हे रुद्र! तेरी (स्तवानः) प्रशंसा होनेपर (जरित्रे) उपासकको तू (मृड) सुख दे। (ते सेन्यं) तेरी शक्ति (अस्मत् अन्यं) हम सबको बचाकर दूसरे दुष्टका (निवपन्तु) नाश करे। "

इस मंत्रमें **' जनानां राजानं रुद्रं '** ये शब्द विशेष महत्त्व रखते हैं। सब लोगोंका एक राजा रुद्र है।

गर्त-सद् = निहितं गुहा सत्। (यजु० ३२।८)
गुहाऽऽहितः
गुहा-चरः = परमं गुहा यत्। (अथर्व० २।१।१;२)
गुहा-शयः = गुह्यं ब्रह्म।

उक्त शब्दोंके साथ ' **गर्त-सद्** ' शब्द देखने और विचार करनेसे इस शब्दके गूढ आशयका पता लग सकता है। ' **गुहाऽऽहित** ' और ' **गर्त-सद्** ' ये दोनों शब्द एक ही अर्थ बता रहे हैं। ' गर्त ' शब्दका ' गुहा ' ऐसा अर्थ ऊपर दिया ही है। अस्तु। इस मंत्रसे भी ' रुद्र ' का पूर्वोक्त भाव ही दृढ हो रहा है। तात्पर्य ' रुद्र ' शब्दका ' सर्वव्यापक परमात्मा ' ऐसा एक अर्थ निःसंदेह है। इस मंत्रका ऋग्वेदका पाठ यहां देखिए—

स्तुहि श्रुतं गर्तसदं युवानं मृगं न भीममुपहत्नुमुग्रम्। मृळा जरित्रे रुद्र स्तवानोऽन्यं ते अस्मन्नि वपन्तु सेनाः ॥ (ऋ० २।३३।११)

इसका अर्थ स्पष्ट है।

अपने अंतःकरणमें रुद्रकी खोज।

अन्तरिच्छन्ति तं जने रुद्रं परो मनीषया। गृभ्णन्ति जिह्वया ससम् ॥ (ऋ० ८।७२।३)

" मुमुक्षुजन (तं रुद्रं) उसी रुद्रको (जने परः अन्तः) मनुष्यके अत्यंत बीचके अन्तःकरणमें (मनीषया) बुद्धि द्वारा जानना (इच्छन्ति) चाहते हैं। (जिह्वया) जिह्वासे (ससं) फलको (गृह्णन्ति) लेते हैं। "

मुमुक्षुजन जिह्वासे सात्विक पदार्थोंको लेते हैं। '**सस**' शब्दका अर्थ 'फल, धान्य, अनाज, शाकभाजी, ओषधि, वनस्पति' इतना ही है। जिह्वासे जिस अन्नका ग्रहण करना उचित है, उसका इस मंत्रने यहां उपदेश किया है। फल, धान्य, अनाज, शाकभाजी आदि पदार्थ ही खाने चाहिए। इस प्रकारका सात्त्विक आहार करनेवाले मुमुक्षु लोग उस रुद्र देवको अर्थात् परमात्माको मनुष्यके अतःकरणके अत्यन्त गहरे स्थानमें अपनी सात्त्विक विचारशक्तिके द्वारा ढूँढ ढूँढ कर देखनेकी इच्छा करते हैं।

अनेक रुद्रोंमें व्यापक 'एक रुद्र।'

पूर्वोक्त प्रमाणोंसे 'रुद्र' एक है और वह सर्वत्र व्यापक है, यह बात सिद्ध हो चुकी। अब अनेक रुद्रोंका वर्णन, जो वेदमें आता है, उसका विचार करना चाहिए।

रुद्रं रुद्रेषु रुद्रियं हवामहे। (ऋ. १०।६४।८)

"(रुद्रेषु) अनेक रुद्रोंमें रहनेवाले (रुद्रियं रुद्रं) प्रशंसा करने योग्य एक रुद्रकी (हवामहे) हम सब पूजा करते हैं।"

एक रुद्रदेव अनेक रुद्रोंमें रहता है, अर्थात् यह एक रुद्र सबमें व्यापक है और अनेक रुद्र व्याप्य हैं। अनेक रुद्र अणु हैं और यह एक रुद्र महान् है। इस एक रुद्रके द्वारा अनेक रुद्र प्रेरित होते हैं, अर्थात् अनेक रुद्र प्रेर्य हैं और यह एक रुद्र सबका प्रेरक है। तथा—

(१) शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः। (ऋ. ७।३५।६)
(२) रुद्रो रुद्रेभिर्देवो मृळयाति नः। (ऋ.१०।६६।३)
(३) रुद्रं रुद्रेभिरावहा बृहन्तम्। (ऋ. ७।१०।४)

"(१) अनेक रुद्रोंके साथ एक रुद्र हम सबका कल्याण करे। (२) अनेक रुद्रोंके साथ एक रुद्रदेव हम सबको सुख देवे। (३) अनेक रुद्रोंके साथ रहनेवाले एक महान् रुद्रकी पूजा करो।" ये सब मंत्र उक्त भाव बता रहे हैं। अनेक छोटे रुद्रोंमें एक महान् रुद्र की प्रेरणा होती है, इस आशयका ध्वनि निम्न मंत्रमें देखने योग्य है—

तदिद्रुद्रस्य चेतति यह्वं पत्लेषु धामसु।
मनो यत्रा वि तद्दधुर्विचेतसः॥ (ऋ० ८।१३।२०)

"(रुद्रस्य तत् यह्वं) रुद्र देवकी वह एक महान् प्रेरक शक्ति (पत्लेषु धामसु) अनेक सनातन स्थानोंमें (इत् चेतति) निश्चयसे चेतना देती है। (यत्र) जिस शक्तिमें (वि-चेतसः) विशेष ज्ञानी लोक (तत् मनः) अपना वह मन (वि-दधुः) विशेष प्रकार धारण करते हैं।"

इस मंत्रमें 'रुद्र' की '**यह्व**' शक्तिका वर्णन है। यह शक्ति सब को सतत चेतना दे रही है।

एक रुद्रके पुत्र अनेक रुद्र हैं।

रुद्रस्य ये मीळ्हुषः सन्ति पुत्रा यांश्चो नु दाधृ-
विर्भरध्यै। विदे हि माता महो मही पा
सेत्पृश्निः सुभ्वे गर्भमाधात्॥ ३॥ (ऋ० ६।६६।३)

"(मीळ्हुषः रुद्रस्य) एक दानशूर रुद्रदेवके (ये पुत्राः) जो अनेक रुद्र संज्ञकपुत्र हैं, (यान् च उ नु) और जिनका निश्चयसे (भरध्यै) भरण-पोषण, पालन करनेकी सब शक्ति वह एक अद्वितीय रुद्र (दाधृविः) धारण करता है। (महः) इस महान् रुद्रकी शक्तिको (सा मही माता विदे) वह मूल प्रकृतिरूपी बडी माता जानती है, अथवा प्राप्त करती है और (सु-भ्वे) जीवोंकी उत्तम अवस्था होनेके लिये (सा पृश्निः) वह विविध रंगरूपवाली माता (इत्) निश्चयसे (गर्भं आधात्) जीवोंको गर्भमें धारण करती है।"

इस मंत्रमें अनेक रुद्र इस एक रुद्रके पुत्र हैं, ऐसा स्पष्ट कहा है। इस लिये परमपिता परमात्मा ही रुद्र है और सब जीव उसके पुत्र हैं, ऐसा ही इसका अर्थ मानना उचित है।

अनंत प्राणी अनेक रुद्र हैं।

ये अनंत रुद्र जीव हैं, ये प्राणी अर्थात् जीवन धारण करनेवाले हैं। ये मर्य, मर्त्य हैं। इनका शरीर धारण होनेके कारण जन्म होता है और मृत्यु भी होती है। यद्यपि जन्ममरण शरीरका धर्म है, तथापि इन रुद्रोंकी शरीरके साथ स्थिति होनेके कारण, शरीरके साथ इनका जन्म और मरण हुआ, ऐसा कहा जाता है। अर्थात् शरीरके धर्मोंका इनके ऊपर आरोपण होता है। ये '**मर्त्य**' हैं, ऐसा निम्न मंत्रमें कहा है—

ते जज्ञिरे दिव ऋष्वास उक्षणो रुद्रस्य मर्या
असुरा अरेपसः। पावकासः शुचयः सूर्या
इव सत्वानो न द्रप्सिनो घोरवर्पसः॥
(ऋ० १।६४।२)

"(ते) वे अनंत रुद्र (ऋष्वासः) उच्च (दिवः उक्षाणः) दिव्य बलसे युक्त (असु-राः) जीवनशक्तिसे प्रकाशनेवाले, (अ-रेपसः) निष्कलंक और (मर्याः) मर्त्य हैं। वे उस (रुद्रस्य जज्ञिरे) एक रुद्रसे प्रकट होते हैं। वे (पावकासः)

अग्निके समान पवित्र (शुचयः) तेजस्वी और शुद्ध (सूर्य इव सत्वानः) सूर्यके समान सत्त्वशाली और (द्रप्सिनः न) वर्षा करनेवाले मेघोंके समान (घोर-वर्पसः) सुंदर और विशाल रूप धारण करनेवाले हैं।"

इस मंत्रमें रुद्रसंज्ञक जीवके गुणधर्म बताये हैं। इनमें **'मर्त्य'** शब्द आया है। प्राणी, शरीरधारी, मरणधर्मवाला, ऐसा उस शब्दका अर्थ है। जिन अनंत रुद्रोंमें एक महान् रुद्र व्यापक हो रहा है वे अनंत रुद्र **'अनंत मर्त्य'** प्राणी हैं; यह भाव इस मंत्रसे प्रकट हो रहा है। **'जनानां राजा रुद्रः'** ऐसा एक वचन पूर्व स्थलमें आया है। उसके साथ इस मंत्रका आशय **'मर्त्यानां पिता रुद्रः'** देखने योग्य है। एक ही भाव किस प्रकार भिन्न भिन्न प्रकारसे बताया गया है, यह यहां देखने योग्य है। इसी विषयका स्पष्टीकरण करनेवाले निम्न लिखित मंत्र यहां देखिए—

क ईं व्यक्ता नरः सनीळा रुद्रस्य मर्या अधा स्वश्वाः ॥ १ ॥ न किर्ह्येषां जनूंषि वेद ते अंग विद्रे मिथो जनित्रम् ॥ २ ॥ (ऋ० ७।५६)

"(अध) अजी ! (स्वश्वाः = सु-अश्वाः) उत्तम भोग भोगनेवाले, (स-नीळाः) एक आश्रयसे रहनेवाले और (व्यक्ताः नरः) अलग अलग दीखनेवाले पुरुष (के) कौन हैं ? वे (रुद्रस्य मर्याः) रुद्रके मर्त्य पुत्र हैं। (एषां जनूंषि) इनके जन्मका वृत्तांत (न किः वेद) कोई भी नहीं जानता ? हे (अंग) प्रिय ! (ते मिथः) वेही परस्पर एक दूसरेका (जनित्रं) जन्म (विद्रे) जानते हैं।"

इस मंत्रमें **'रुद्रस्य मर्याः'** रुद्रके मर्त्य पुत्रोंका वर्णन फिर आया है। इनमें अलग अलग व्यक्तित्व अर्थात् व्यक्तित्व, पृथक्त्व, इकाई है, इस लिये इनको 'व्यक्त' अर्थात् 'व्यक्ति-भाव' से युक्त कहा है। प्रकृति और पुरुष ऐसे जो दो भेद हैं, उनमें ये 'पुरुष' हैं, इसलिये मंत्रमें इनको **'नर'** कहा है। एक ईश्वरके आश्रयसे ये रहते हैं, इसलिये इन सबको 'स-नीळाः' (स-नीडाः) कहा है। यहां—

यत्र विश्वं भवत्येक-नीडम्। (यजु० ३२।८)
यत्र विश्वं भवत्येक-रूपम्। (अथर्व० २।१।१)

इन मंत्रोंमें **'एक-नीड'** और **'एक-रूप'** ये शब्द देखने योग्य हैं। **'स-नीळ, स-नीड, एक-नीड, एक-रूप'** ये सब शब्द 'सबका एक ही आश्रयस्थान है,' ऐसा बता रहे हैं।

इस विचारसे पता लग जायगा कि (१) अनंत रुद्रोंका जन्म, (२) उनको पुत्र कहना, (३) उनकी माताका वर्णन, (४) उनके गर्भधारणका वर्णन यहां है।

रुद्रके पुत्र मरुत् हैं। मरुतोंके विषयमें श्री सायणाचार्य लिखते हैं कि **'मनुष्यरूपा वा मरुतः। पूर्वं मनुष्याः संतः पश्चात् सुकृतविशेषेण ह्यमरा आसन्।'** मरुत् पहिले मनुष्य ही होते हैं, परंतु उत्तम प्रशस्त कर्म करनेके कारण जो अमर बनते हैं (ऋ० सायणभाष्य, मं. १०, सू. ७७, मं. २) इस प्रकार मरुतोंके मनुष्यरूप होनेमें शंका ही नहीं है। मनुष्योंके अतिरिक्त भी मरुतोंका अर्थ है, उसका विचार मरुतदेवताके ग्रंथमें किया गया है। अब मरुतोंके मनुष्य होनेके विषयमें वेदका प्रमाण देखिए—

अग्निश्रियो मरुतो विश्वकृष्टय आत्वेषमुग्रमव ईमहे वयम्। ते स्वानिनो रुद्रिया वर्षनिर्णिजः सिंहा न हेषकृतवः सुदानवः॥ (ऋ. ३।२६।५)

"(ते रुद्रियाः मरुतः) वे रुद्रके पुत्र मरुत् (अग्नि-श्रियः) अग्निके समान तेजस्वी, (स्वानिनः) उत्तम शब्द बोलनेवाले, (सिंहा न हेषकृतवः) सिंहके समान गंभीर शब्द करनेवाले, (वर्ष-निर्णिजः) वृष्टिके द्वारा शुद्ध होनेवाले, (सु-दानवः) उत्तम दान करनेवाले, (विश्वकृष्टयः) सर्व-मनुष्य हैं। (वयं) हम सब (त्वेषं उग्रं अवः) तेजस्वी शौर्यमय संरक्षण उनसे (आ ईमहे) प्राप्त करते हैं।"

इस मंत्रमें **'विश्व-कृष्टि'** शब्द अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। **'कृष्टि'**- शब्दका अर्थ- **(१)** मनुष्यमात्र, मानवजाति है। (२) देशनिवासी राष्ट्रीय जनता। **'विश्व-कृष्टिः'** = (विश्व+जन=सर्व+जन) सब मनुष्य, मनुष्यमात्र, मनुष्यजाति।

यहां कई शंका करेंगे कि मानवजातिके विषयका उल्लेख वेदमें कहां है ? वैदिक धर्म **'वैयक्तिक'** होनेके कारण उसमें **'सार्वजनिक भाव'** नहीं होगा। इस शंकाका उत्तर देनेके लिये यहां सार्वजनिक भाव बतानेवाले कुछ वैदिक शब्दोंका उल्लेख करना चाहिए। देखिए निम्न शब्द—

(१) विश्व-कृष्टिः = (सर्व-मनुष्य)= मानवजाति।
(२) विश्व-चर्षणिः = (सर्व-जन)= सब लोक, मनुष्य, मनुष्यमात्र, मानवजाति।
(३) विश्व-जनः = (सर्व-जन)= मानवजाति।
(४) विश्व-मनुष्यः
(५) विश्व-मानुषः } =(सर्व-मनुष्य)= मनुष्यमात्र।

(६) **विश्वा-नरः**= (सर्व-नर)= सब मनुष्य ।

(७) **पंच-जनाः**= ज्ञानी, शूर, व्यापारी, कारीगर और साधारण लोक । ये पांच प्रकारके लोक मिलकर सब जनता होती है ।

इस तरह सार्वजनिक भावोंकी विस्तारपूर्वक कल्पना वेदमें ही स्पष्ट है । वैदिक धर्म ' **सार्वजनिक भावका धर्म** ' ही है ।

प्रस्तुत मंत्रमें ' **विश्व-कृष्टि** ' शब्द ' मानव-जाति ' का भाव बता रहा है । मरुतोंका अथवा रुद्र-पुत्रोंका अर्थात् छोटे छोटे असंख्य रुद्रोंका स्वरूप ' विश्व-कृष्टि ' शब्दने बताया है । इस प्रकार अनेक रुद्र ये अनंत मानवप्राणी हैं, यह बात सिद्ध हो गई । ' मर्य ' शब्दसे साधारण मर्त्य अर्थात् मरणधर्मवाले प्राणिमात्र, ऐसा भी भाव निकल सकता है । इसका निश्चय अब करेंगे ।

अनेक रुद्रोंकी संख्या ।

इस अनंत रुद्रोंकी संख्याके विषयमें वाजसनेय यजुर्वेदमें निम्न लिखित मंत्र देखने योग्य है—

असंख्याताः सहस्राणि ये रुद्रा अधि भूम्याम् ।
(यजु. १६।५४)

" असंख्यात हजार (ये रुद्राः) जो रुद्र (भूम्यां अधि) पृथ्वी पर हैं । " अर्थात् ये अनेक रुद्र अनंत हजार इस पृथ्वीपर हैं । प्राणियोंकी संख्या किसी समयमें भी पृथ्वीपर निश्चित नहीं कही जा सकती । क्योंकि प्राणियोंकी संख्या अनेक कारणोंसे बढ भी सकती है और घट भी सकती है । इस हेतुसे यहां निश्चित संख्या नहीं कही, परंतु ' अनंत हजार ' ऐसा ही कहा है । इससे वेदके शब्दोंका अद्भुत महत्त्व ज्ञात हो सकता है ।

यजुर्वेद वाजसनेय संहिता अ० १६ में रुद्रोंके कई नाम लिखे हैं । यह अध्याय काण्व संहितामें १७ वां है । और तैत्तिरीय संहितामें यही रुद्राध्याय ४।५।१।१ में है । अब इन रुद्रोंका वर्गीकरण करना है । परंतु इससे पूर्व ' **रुद्र** ' शब्दका भाष्यकार आचार्योंका किया हुआ अर्थ अवश्य देखना चाहिए । क्योंकि उन अर्थोंको देख कर ही हम रुद्रोंके वर्ग बना सकते हैं ।

रुद्रके विषयमें श्रीसायणाचार्यजीका मत ।

श्री सायणाचार्यजीने चारों वेद और सब मुख्य ब्राह्मणोंपर भाष्य किया है । इनका भाष्य विशेषतया याज्ञिक पद्धतिके अनुसार है । इस लिये इनका भाष्य देखनेसे याज्ञिक-संप्रदायवालोंका मत ज्ञात हो सकता है । अब देखिए श्री सायणाचार्यजी ' रुद्र ' के विषयमें क्या कहते हैं—

ऋग्वेद-भाष्य ।

१. रुद्रस्य कालात्मकस्य परमेश्वरस्य । (ऋ. ६।२८।७)

२. रुद्राय क्रूराय अग्नये । (ऋ. १।२७।१०)

३. रुत् दुःखं तद्धेतुभूतं पापं वा । तस्य द्रावयितारौ रुद्रौ । संग्रामे भयंकरं शब्दयन्तौ वा ॥
(ऋ. १।१५८।१)

४. रुद्राणां.....प्राणरूपेण वर्तमानानां मरुतां । यद्वा । रोदयितॄणां प्राणानां । प्राणा हि शरीरान्निर्गता· सन्तो बंधुजनान् रोदयन्ति ॥ (ऋ. १।१०१।७)

५. रुद्राणां रोदनकारिणां शूरभटानां वर्तनिर्मार्गो घाटीः रूपो ययोस्तौ रुद्रवर्तनी । (ऋ. १।३।३)

६. रोदयन्ति शत्रूनिति रुद्राः । (ऋ. ३।३२।३)

७. रुद्रौ संग्रामे रुदन्तौ । (ऋ. ८।२६।५)

८. हे रुद्र ! ज्वरादिरोगस्य प्रेक्षणेन संहर्तर्देव ।
(ऋ. १।१६९।१)

९. रुद्रियं सुखं । (ऋ. २।११।३)

१०. रुद्रियं रुद्रसंबंधि भेषजं । (ऋ. १।४३।२)

अथर्ववेद-भाष्य ।

१. रोदयति सर्वं अंतकाले इति रुद्रः संहर्ता देवः ।
(अथर्व. १।१९।३)

२. रौति शब्दायते तारकं ब्रह्म उपदिशतीति रुद्रः । तथा च जाबालश्रुतिः । ' अत्र हि जन्तोः प्राणे-पूत्क्रामत्सु रुद्रस्तारकं ब्रह्म व्याचष्टे ॥ (जाबा. उ. १)
(अथर्व. २।२७।६)

३. तस्मै जगत्स्रष्ट्रे सर्वं जगदनुप्रविष्टाय रुद्राय ।
(अथर्व. ७।९२।१)

४. रुत् दुःखं दुःखहेतुर्वा तस्य द्रावको देवो रुद्रः परमेश्वरः । (अथर्व. ११।२।३)

५. सर्वप्राणिनो मामनिष्ट्वा विनश्यन्ति इति स्वयं रौति रुद्रः । (अथर्व. १८।१।४०)

६. स्वसेवकानां दुःखस्य द्रावकत्वं (रुद्रस्य) ।
(अथर्व. १८।१।४०)

७. महानुभाव रुद्र । (अथर्व. १८।१।४०)

८. रुद्रस्य हिंसकस्य देवस्य । (अथर्व. ६।५९।३)

९. रुद्रस्य ज्वराभिमानिदेवस्य हेतिः आयुधं ।
(अथर्व. ४।२१।७)

१०. रुद्रः रोदयिता शूलाभिमानी देवः ।
(अथर्व. ६।९०।१)

११. रोदयति उपतापेन अश्रूणि मोचयति इति रुद्रो ज्वराभिमानी देवः । (अथर्व. ६।२०।२)

१२. रोदयति शत्रूनिति रुद्रः । (अथर्व. ७।९२।१)

१३. रुद्रा रोदकाः । (अथर्व. १९।९।१०)

१४. रुद्राः रोदयितारः अन्तरिक्षस्थानीया देवाः ।
(अथर्व. १९।११।४)

१५. रुद्रः पशूनां अभिमन्ता पीडाकरो देवः ।
(अथर्व. ६।१४१।१)

ये 'रुद्र' शब्दके श्री सायणाचार्यजीके किये हुए अर्थ हैं । अब यजुर्वेदके भाष्यमें श्री उवटाचार्य और श्री महीधराचार्य क्या कहते हैं, देखिए—

श्री उवटाचार्यजीका 'रुद्र' विषयक मत ।

१. रुद्रैः स्तोतृभिः । (यजु. भाष्य, ३८।१६)

२. रुद्रवर्तनी रुग्णवर्तनी । (य. १९।८२)

३. रुद्रौ शत्रूणां रोदयितारौ । (य. २०।८१)

४. रुद्रैः धीरैः । (य. ११।५५)

श्री महीधराचार्यजीका 'रुद्र' संबंधी मत ।

१. रुद्रस्य शिवस्य । (वा. यजु. भाष्य १६।५०)

२. रुद्राय शंकराय । (य. १६।४८)

३. रुत् दुःखं द्रावयति रुद्रः ।
रवणं रुत् ज्ञानं राति ददाति ।
पापिनो नरान् दुःखभोगेन रोदयति । (य. १६।१)

४. रुद्रस्य क्रूरदेवस्य । (य. ११।१५)

५. रुत् दुःखं द्रावयति नाशयति रुद्रः । (य. १६।२८)

६. रुद्रो दुःखनाशकः । (य. १६।३९)

७. रोदयति विरोधिनां शतं इति रुद्रः । (य. ३।५७)

८. रुद्रौ शत्रूणां रोदयितारौ । (य. २०।८१)

९. रुद्रैः धीरैः बुद्धिमद्भिः । (य. ११।५५)

१०. रुद्रैः स्तोतृभिः । (य. ३८।१६)

११. रुद्रवर्तनी रुग्णवर्तनी भिषजौ अश्विनौ ।
(य. १९।८२)

१२. कदन्नभक्षणे चौर्ये वा प्रवर्त्य, रोगमुत्पाद्य, जनान् घ्नन्ति तेभ्यः पृथ्वीस्थेभ्यो अन्नायुधेभ्यो रुद्रेभ्यः ॥
(य. १६।६६)

१३. कुवातेनान्नं विनाश्य वातरोगं वा उत्पाद्य जनान् घ्नन्ति । (य. १६।६५)

श्री स्वामी दयानंद सरस्वतीजीका रुद्रके विषयमें मत ।

ऋग्वेद-भाष्य ।

१. रुद्राय परमेश्वराय जीवाय वा ॥ ..... ॥ रुद्रशब्देन त्रयोऽर्था गृह्यन्ते । परमेश्वरो जीवो वायुश्चेति । तत्र परमेश्वरः सर्वज्ञतया येन यादृशं पापकर्म कृतं तत्फलदानेन रोदयिताऽस्ति । जीवः खलु यदा मरणसमये शरीरं जहाति पापफलं च भुंक्ते तदा स्वयं रोदिति । वायुश्च शूलादिपीडा कर्मणा कर्मनिमित्तः सन् रोदयितास्ति । अत एते रुद्रा विज्ञेयाः । (ऋग्वेद. १।४३।१)

२. रुद्रः दुःखनिवारकः । (ऋ. २।३३।७)

३. रुद्रः दुष्टानां भयंकरः । (ऋ. ५।४६।२)

४. रुद्रः दुष्टदण्डकः । (ऋ. ५।५१।१३)

५. रुद्रः सर्वरोगदोषनिवारकः । (ऋ. २।३३।२)

६. रुद्रस्य रोगाणां द्रावकस्य निःसारकस्य ।
(ऋ. ७।५६।१)

७. रुद्रः रोगाणां प्रलयकृत् । (ऋ. २।३३।३)

८. रुद्रः कुपथ्यकारिणां रोदयिता । (ऋ. २।३३।४)

९. रुद्रस्य प्राणस्य वर्तनिः मार्गः ययोस्तौ रुद्रवर्तनी ।
(ऋ. १।३।३)

१०. रुद्रं शत्रुरोद्धारं । (ऋ. १।११४।४)

११. रुद्रस्य शत्रूणां रोदयितुर्महावीरस्य । (ऋ. १।८५)

१२. रुद्राणां प्राणानां दुष्टान् श्रेष्ठांश्च रोदयतां ।
(ऋ. १०।१०१।७)

१३. रुद्र ! रुतः सत्योपदेशान् राति ददाति तत्संबुद्धौ ।
(ऋ. १।११४।३)

१४. रुद्रः अधीतविद्यः । (ऋ. १।११४।११)

१५. रुद्राय सभाध्यक्षाय । (ऋ. १।११४।६)

१६. रुद्रः न्यायाधीशः । (ऋ. १।११४।२)

१७. रुद्रियं रुद्रस्येदं कर्म । (ऋ. १।४३।२)

यजुर्वेद-भाष्य।

१. रुद्रः परमेश्वरः। चतुश्चत्वारिंशद्वर्षकृतब्रह्मचर्यो विद्वान् वा। (यजु. ४।२०)
२. रोदयत्यन्यायकारिणो जनान् स रुद्रः। (य. ३।५७)
३. दुष्टानां रोदयिता विद्वान् रुद्रः। (य. ४।२१)
४. रुद्रः शत्रूणां रोदयिता शूरवीरः। (य. ९।३९)
५. रुद्रस्य शत्रुरोदकस्य स्वसेनापतेः। (य. ११।१५)
६. रुद्रः जीव। (य. ८।५८)
७. रुद्राः एकादशप्राणाः। (य.२।५)
८. रुद्राः प्राणरूपा वायवः। (य. ११।५४)
९. रुद्रा बलवंतो वायवः। (य. १५।११)
१०. रुद्राः सजीवा अजीवाः प्राणादयो वायवः। (य. १६।५४)
११. रुद्रा मध्यस्थाः। (य. १२।४४)
१२. रुद्रा रुद्रसंज्ञका विद्वांसः। (य. ११।५८)
१३. रुद्रः राजवैद्यः। (य. १६।४९)
१४. रुद्रस्य सभेशस्य। (१६।५०)

इस तरह भाष्य में अर्थ हैं।

यजु० अ० १६ में रुद्रवाचक अनेक पद आये हैं। इनकी संख्या लगभग २४० है।

(१) विश्व-रूप, (२) विद्युत्, (३) वायु, (४) वृक्ष, (५) गृत्स, (६) मंत्रिन्, (७) भिषक्, (८) सभा, (९) सभापति, (१०) स्थ-पति, (११) सेनानी, (१२) सेना, (१३) इषु-कृत्, (१४) रथी, (१५) वणिज्, (१६) किरिक, (१७) तक्षन्, (१८) परि-चर, (१९) स्तेन, (२०) प्रतरण, (२१) श्वन्, (२२) तल्प्य।

ये सब रुद्र ही हैं- (१) सर्वव्यापक ईश्वर, (२) बिजुली, (३) वायु, (४) वृक्ष, (५) विद्वान्, (६) दिवाण, (७) वैद्य, (८) सभा, (९) सभापति, (१०) राजा, (११) सेनापति, (१२) सेना, (१३) शस्त्र बनानेवाला, (१४) वीर, (१५) बनिया, (१६) किसान, (१७) बढई, (१८) नौकर, (१९) चोर, (२०) धोखेबाज, (२१) कुत्ता, (२२) खटमल; इन सबको यहां रुद्र ही कहा है, इस सबमें **' रुद्रत्व '** है यह निश्चित है।

' रोदयति इति रुद्रः ' (जो दूसरोंको रुलाता है, वह रुद्र है) यह रुद्र शब्दका एक अर्थ है। दूसरोंको रुलानेका धर्म रुद्रमें है, यह बात इस अर्थसे सिद्ध होती है। रुलानेका तात्पर्य कष्ट अथवा दुःख देना है। देखिए—

(१) रोदयति शत्रून् इति रुद्रः महा-वीरः।
(२) रोदयति दुष्टान् इति रुद्रः न्यायाधीशः।
(३) रोदयति धनिकान् इति रुद्रः चोरः।
(४) रोदयति निद्राक्रान्तान् इति रुद्रः तल्प्य-कीटः।

(१) शत्रुओंको रुलानेके कारण शूरको रुद्र कहते हैं। (२) दुष्टोंको रुलानेके कारण न्यायाधीशको रुद्र कहते हैं। (३) धनिकोंको रुलानेके कारण चोरको रुद्र कहते हैं। (४) सोनेवालोंको रुलानेके कारण खटमलको रुद्र कहते हैं।

उक्त चार विग्रहोंमें क्रमशः **' (१) शत्रून्, (२) दुष्टान्, (३) धनिकान्, (४) निद्राक्रान्तान्। '** इन चार पदोंका अध्याहार अर्थात् कल्पना की है। और उस कल्पनाके अनुसार ' रुद्र ' शब्दके चार भिन्न भिन्न अर्थ किये हैं। जहां जैसा पूर्वापर संबंध होगा, वहां वैसा अर्थ लेना उचित है।

उक्त चार आर्थोंमें **' रुलानेका धर्म '** सबमें समान है। यही यहां **' रुद्रत्व '** है। **' रोदयितृत्वं रुद्रत्वं '** रुलानेका धर्म ही रुद्रपन है, ऐसा हम यहां कह सकते हैं। जहां जहां ' रुलानेका गुण ' होगा, वहां वहां रुद्रत्व होगा, यह इस विवरण का तात्पर्य है।

इस प्रकार अन्य स्थानोंमें भी समझना चाहिए। यह बात स्पष्ट है कि इस अर्थमें ' स्वयं दुःखका अनुभव करना रुद्रपनका लक्षण ' है। दूसरोंको रुलाना अथवा स्वयं रोना ये दोनों रुद्रके लक्षण हैं। इन दोनों अर्थोंको लेनेसे पूर्वोक्त रुद्रवाचक अनेक शब्दोंमेंसे कई शब्दोंका मूल आशय खुल जाता है और इस बातका निश्चय होता है, कि इनको रुद्र क्यों कहा गया है।

' रुद्र ' के इतने ही लक्षण नहीं हैं। **' रुत् ज्ञानं तत् ददाति इति रुद्रः। '** जो ज्ञानको उपदेश द्वारा देता है, वह रुद्र होता है। इस अर्थको लेनेसे **' ज्ञानी, उपदेशक, गुरु, व्याख्यानदाता '** ये रुद्र हैं, ऐसा प्रतीत होगा। पूर्वोक्त शब्दोंमें ' अधिवक्ता ' शब्द इसी अर्थका प्रकाश करनेवाला है। ' श्रुत, गृत्स, मंत्रिन् ' ये भी शब्द इसी भावको बतानेवाले हैं। **' ज्ञानदातृत्वं रुद्रत्वं '** दूसरोंको उपदेश करनेका रुद्रका धर्म है, ऐसा इस अर्थसे सिद्ध होता है।

' रुद् दुःखं द्रावयति विनाशयति इति रुद्रः। ' रुत् अर्थात् दुःख, उसका जो नाश करता है, वह रुद्र कहलाता है। ' क्षत्र ' शब्दका अर्थ ' क्षतात् त्रायते ' जो दुःखसे बचाता है,

ऐसा होता है। यह रुद्रका एक अर्थ है।

रुद्+द्र= दुःखको दूर करनेवाला।

क्षत्+त्र= दुःखसे बचानेवाला।

ये दोनों शब्द बिलकुल समान अर्थवाले हैं। इसलिये क्षत्रिय-वाचक शब्द रुद्रके लिये आये हैं। इस बातको पूर्वोक्त वीरवर्गमें पाठक देख सकते हैं।

'रुद् रोगं राति ददाति इति रुद्रः रोगोत्पादकः।' जो रोगोंको उत्पन्न करता है, उसको रुद्र कहते हैं। बुरी हवा, सडा हुआ जल, दुर्गन्धयुक्त भूमि, कुपथ्य आदि सब इस अर्थके कारण रुद्र होते हैं। **'रुत्'** शब्दके दुःख और रोग ऐसे अर्थ कोशोंमें हैं। रोग उत्पन्न करना यह रुद्रका कार्य कई मंत्रोंमें वर्णन किया है, उनमेंसे एक मंत्र यहां देखिए—

येऽन्नेषु विविध्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान्।

(यजु. अ. १६।६२)

'(ये) जो रुद्र (अन्नेषु) अन्नोंमें और (पात्रेषु) बर्तनोंमें प्रविष्ट होकर (पिबतः जनान्) जल पीनेवाले मनुष्योंको (विविध्यन्ति) अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न करते हैं।' यह रुद्रका वर्णन विशेष प्रकारसे देखने योग्य है। इसी मंत्रके भाष्य देखिए—

श्री सायणाचार्य— ये रुद्रा अन्नेषु भुज्यमानेषु स्थिताः सन्तो जनान् विविध्यन्ति, विशेषेण ताडयन्ति। धातुवैषम्यं कृत्वा रोगान् उत्पादयन्ति इत्यर्थः। तथा पात्रेषु पात्रस्थक्षीरोदकादिषु स्थिताः सन्तः क्षीरादिपानं कुर्वतो जनान् विविध्यन्ति। अन्नोदकभोक्तारो व्याधिभिः पीडनीया इति भावः॥ (काण्वयजु. १७।७।१६)

श्री महीधराचार्य— (पूर्ववत्)

श्री उवटाचार्य— ये अन्नेषु अवस्थिताः विविध्यन्ति अतिशयेन विध्यन्ति ताडयन्ति। येषामयमधिकारः अन्नस्य भक्षयितारो व्याधिभिर्गृहीतव्या इति इ०॥

उक्त आचार्य-मतका तात्पर्य— ये रुद्र अन्न और पानीमें प्रविष्ट होकर उस अन्नको खानेवाले और उस पानीको पीनेवाले लोगोंमें रोग उत्पन्न करते हैं।

रोग उत्पन्न करना रुद्रोंका कर्म है। रोगजन्तुओंका यह वर्णन है। **'रोग-जन्तु'** अन्नके द्वारा और जलके द्वारा शरीरमें प्रविष्ट होकर शरीरमें नाना प्रकारके रोग उत्पन्न करते हैं, यही भाव उक्त मंत्रका है। इसलिये रोगबीजोंका नाम रुद्र हुआ है। रोगजंतु किस प्रकारके होते हैं और कहां रहते हैं, इस बातका ज्ञान पूर्वोक्त अध्यायमें **'जन्तुवर्ग'** के रुद्रवाचक शब्दोंके अर्थोंका विचार करनेसे स्पष्टतया हो सकता है।

तात्पर्य इस प्रकार रुद्रोंके लक्षण हैं। यहां नमूनेके लिये थोडेसे दिये हैं। विशेष विचार करनेके लिये पूर्वोक्त आचार्योंके अर्थोंका मनन करना उचित है। इन अर्थोंको देखनेसे **'रुद्रत्व'** की कल्पना हो सकती है। अर्थात् **'रुद्र'** यह कोई एक ही पदार्थ नहीं है, परंतु यह अनेक कल्पनाओंका समूहवाचक शब्द है।

जिस प्रकार 'प्राणी' कहनेसे 'मनुष्य, घोडा, गाय, चूहा' आदि का बोध होता है अथवा 'मनुष्य' कहनेसे 'ज्ञानी, शूर, व्यापारी' आदि जनोंका बोध होता है, इसी प्रकार 'रुद्र' कहनेसे 'ज्ञानी, शूर, दुष्ट, सज्जन' आदिका बोध होता है। परंतु ये सब प्रत्यक्षमें एक नहीं हैं, इनमें भिन्नत्व है। इस भिन्नत्वका स्वरूप यहां बताया है और इस समयतक के संपूर्ण विवरणमें भी इसी भिन्नत्वका रूप स्पष्ट किया है।

श्री भ० गीताके विभूतियोगके साथ तुलना।

श्रीमद्भगवद्गीताके १० अध्यायमें 'विभूतियोग' कहा है। उसका थोडासा भाग देखिए—

रुद्राणां शंकरश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम्।
वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम्॥२३॥
यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः॥२५॥
मृगाणां च मृगेन्द्रोऽहं वैनतेयश्च पक्षिणाम्॥३०॥
अध्यात्मविद्या विद्यानां वादः प्रवदतामहम्॥३२॥
द्यूतं छलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम्॥३६॥
वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि पांडवानां धनंजयः॥३७॥
यद्यद्विभूतिमत्सत्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंशसंभवम्॥४१॥
अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन॥
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्॥४२॥

(श्री भ० गी० अ० १०)

"रुद्रोंमें मैं शंकर, यक्ष और राक्षसोंमें मैं कुबेर, वसुओंमें मैं पावक, चोटियोंवाले पहाडोंमें मैं मेरुपर्वत हूं। यज्ञोंमें जपयज्ञ, स्थिर पदार्थोंमें हिमालय, मृगोंमें सिंह, पक्षियोंमें गरुड, विद्याओंमें आत्मविद्या और वक्ताओंका भाषण मैं ही हूं। **कपटियोंका द्यूत** अर्थात् **जूआ**, तेजस्वियोंका तेज, वृष्णियोंमें वासुदेव, पांडवोंमें अर्जुन **मैं हूं**। जो जो विशेष ऐश्वर्ययुक्त,

शोभायुक्त और उच्च तत्त्व होगा, वह सब मेरे ही अंशसे हुआ है, ऐसा तुम जानो। अथवा इतने विस्तारसे कहनेकी क्या आवश्यकता है? सारांशरूपसे इतना ही कहना पर्याप्त है कि एक अंशसे सब जगत् व्यापकर मैं रहा हूं।'

जगत्में जो जो ऐश्वर्ययुक्त सत्त्व होता है, वह परमेश्वरके अंशसे होता है, ऐसा यहां कहा है।

इसी 'विभूतियोग' के समान 'रुद्रको चोरके रूपमें मानना' है। कई टीकाकारोंने इस रुद्राध्यायपर टीका करते हुए लिखा है कि चोर और डाकू भी रुद्रके रूप हैं। देखिए—

रुद्रो लीलया चोरादिरूपं धत्ते, यद्वा रुद्रस्य जगदात्मकत्वाच्चोरादयो रुद्रा एव ज्ञेयाः। यद्वा स्तेनादिशरीरे जीवेश्वररूपेण रुद्रो द्विधा तिष्ठति तत्र जीवरूपं स्तेनादिपदवाच्यं तदीश्वररुद्ररूपं लक्षयति यथा शाखाग्रं चन्द्रस्य लक्षकम्। किंबहुना लक्ष्यार्थविवक्षया मंत्रेषु लौकिकाः शब्दाः प्रयुक्ताः॥

(महीधरभाष्य य. अ. १६।२०)

"रुद्ररूपी जगदात्मा लीलासे चोरका रूप धारण करता है। अथवा रुद्र जगदात्मा होनेसे चोरादि सब रुद्र ही जान लीजिए। अथवा चोरादिकोंके शरीरमें जीव और ईश्वररूपसे रुद्र दो प्रकारका होकर रहता है, वहां चोर आदि शब्द जीवरूपके दर्शक होते हुए भी ईश्वररूपके बोधक होते हैं, जिस प्रकार शाखाके अग्रसे चंद्रमाका ज्ञान बताया जाता है। बहुत क्या कहना है? ईश्वरका ज्ञान देनेकी इच्छासे मंत्रोंमें बहुतसे लौकिक शब्द प्रयुक्त किये हैं।"

श्री सायणाचार्य भी अपने काण्व-यजु० अ० १७ के भाष्य में उक्त प्रकार ही कहते हैं। उक्त विषयमें सायण और महीधर की संमति एक जैसी ही है।

१. **छलयतां द्यूतं अस्मि** (गीता)–कपटीयोंका द्यूत मैं हूं।
२. **स्तेनानां पतिः अस्मि** (वेद)–चोरोंका स्वामी मैं हूं।
३. **स्तायूनां पतिः अस्मि**। (वेद)– ठगोंका मुखिया मैं हूं।
४. **तस्कराणां पतिः अस्मि**। (वेद)–डाकुओंका सरदार मैं हूं।
५. **मुष्णतां पतिः अस्मि**। (वेद)–लुटेरोंका श्रेष्ठ मैं हूं।

उक्त गीताके वचनमें '**रुद्राणां शंकरश्चास्मि**।' यह वाक्य है। 'अनंत रुद्रोंमें मैं एक शंकरनामक रुद्र हूं।' इन वाक्यमें रुद्रोंका अनंतत्व और शंकरका एकत्व सिद्ध है। यहां शंकर शब्दसे परमात्मा और रुद्र शब्दसे परमात्मासे उत्पन्न पूर्वोक्त इतर रुद्र लेना उचित है। इस प्रकार करनेसे इस वाक्यकी वेदके आशयके साथ संगति लग सकती है।

पं० जान डॉसनसाहबका मत।

'हिंदु-क्लासिकल डिक्शनरी' में पं० डॉसनसाहब लिखते हैं कि—

'He is the howling terrible god, the god of storms, the father of the Rudras or Maruts, and is sometimes identified with the god of fire. On the one hand he is a distructive deity who brings diseases upon men and cattle, and upon the other he is a beneficent deity supposed to have a healing influence. These are the germs which afterwards developed into the god Siva.'

(पृ. २६९)

'यह (रुद्र) गर्जना करनेवाला भयानक देव है, जो तूफानका देव है और जो रुद्रों अथवा मरुतोंका पिता है। कभी कभी इसका संबंध अग्निदेव के साथ जोडा जाता है। एक ओर यह देव सबका नाश करता है और प्राणियोंमें बीमारियाँ फैलाता है, तथा दूसरी ओर इसको सुखदायक और आरोग्य देनेवाला देव समझा जाता है। ये ही मूल अंकुर हैं कि जिनका विकास होकर आगे जाकर शिवजीका स्वरूप बना है।'

रुद्रको केवल बादलोंका देव पं० डॉसनसाहब मानते हैं। परंतु यदि वे 'रुद्र और मरुत्' के मूल अर्थोंकी थोडीसी भी खोज करते, तो उनको पता लगता कि '**रुद्र**' को '**जगतां पतिः**' अर्थात् 'अनंत ब्रह्मांडोंका स्वामी' कहा है। यह मंत्रों का विधान ये यूरोपियन पंडित देखते ही नहीं।

सर मोनिअर वुइलियमसाहबकी संमति।

यह साहब कहते हैं कि—

'Rudra, roarer, the god of tempests and father and ruler of Rudras and Maruts. (In Veda he is closely connected with Indra and still more with Agni, the god of fire ..... and also with Kala or time, the all-consumer with whom he is afterwards indentified; though

generally represented as a destroying deity... he has also the epithet Siva, ' benevolent or auspicious' and is even supposed to possess healing powers..... from his purifying the atmosphere; .....) '

(सर मो. वुइलियम का संस्कृत-इंग्लिश कोश)

' गरजनेवाला रुद्र तूफानोंका देव है और रुद्रों और मरुतोंका पिता और राजा है। (वेदमें रुद्र देवका इन्द्र और विशेष कर अग्निके साथ संबंध बताया है।..... बादमें सर्वभक्षक कालके साथ भी जोड दिया है। यद्यपि इसको संहारक देव समझा जाता है.....तथापि यह कल्याणकारक और आरोग्यदायक भी वर्णन किया है। यह हवा को शुद्ध करता है।)'

एक ही परमेश्वर जगत्का उत्पादक, पालक, संहारक, कल्याणकारक, सुखदायक आदि अनंत गुणोंसे युक्त हैं। ये लोग इन सब गुणोंको रुद्र-वर्णनमें देखते हैं, परंतु रुद्रको ईश्वर माननेके समय झिझकते हैं।

श्री० म० आर्थर आंटोनी मॅक्डोनेल-साहबकी संमति।

' This god occupies a subordinate position in the Rig Veda being celebrated in only three entire hymhs, in part of another, and in one conjointly with Soma. His hand, his arms, and his limbs are mentioned. He has beautiful lips and wears braided hair. His colour is brown; his form is dazzling, for he shines like the radiant sun, like gold..... he holds the thunderbolt in his arm, and discharges his lightning shaft from the sky; but he is usually said to be armed with a bow & arrows, which are strong and swift. '

' Rudra is very often associated with the Maruts (i. 85). He is their father, and is said to have generated them from the shining under of the cow prishni. '

' He is fierce and destructive like a terrible beast, and is called a bull, as well as the ruddy (arusa) boar of heaven. He is exalted, strongest of the strong, swift, unassailable, unsurpassed in might. He is young and unaging, a lord (Ishana) and father of the world. By his rule and universal dominion he is aware of the doings of man and gods. He is bountiful (midhvams), easily invoked and auspicious (Shiva). But he is usually regarded as malevolent; for the hymns addressed to him chiefly express fear of his terrible shafts and deprication of his wrath..... He is however, not purely maleficent like a demon. He not only preserves from calamity, but bestows blessing. His healing powers are especially often mentioned; he has a thousand remedies, and is the greatest physician of physicians..... '

' The physical basis represented by Rudra is not clearly apparent. But it seems probable that the phenomenon underlying his nature was the storm. ..... ' [A Vedie Reader, pages 56-57]

' .....यह रुद्रदेव ऋग्वेदमें निम्न कोटिका देव है। क्योंकि संपूर्ण ऋग्वेदमें इसके लिये केवल तीन सूक्त ही हैं।..... उसके हात, बाहू और अवयवोंका वर्णन किया है। उसके होंठ सुंदर हैं, और वह जटाजूट धारण करनेवाला है। उसका बदामी रंग है और इसका आकार चमकीला है, क्योंकि तेजस्वी सूर्यके समान वह चमकता है..... मेघविद्युत् का वज्र वह हाथमें धरता है, और आकाशसे तेजस्वी बाण मारता है; परंतु बहुत करके धनुष्यबाण धारण करता है, ऐसा ही कहा गया है...'

' रुद्रका मरुतोंके साथ बहुत संबंध बताया है। वह उनका पिता है और पृश्निनामक गायके चमकीले गर्भस्थानसे मरुतोंकी उत्पत्ति की गई है, ऐसा कहा गया है।'

' क्रूर पशुके समान भयानक और विनाशक वह रुद्र है। और उसको बैल कहते हैं, तथा उसको स्वर्गका लाल सुवर कहा है। वह बडा उच्च, बलवानोंमें बलवान्, चपल, न दबनेवाला और सबसे प्रबल है। वह तरुण और वृद्धावस्थासे रहित है। वह सबका राजा और जगत्का पिता है। सब मनुष्य और सब देवताओंके सब कर्मोंको वह जानता है, क्योंकि उसका राज्य

और उसका शासन सर्व जगत्में है। वह दानशूर, कल्याणमय और सुलभतासे संतुष्ट होनेवाला है। परंतु बहुधा ऐसा समझा जाता है कि वह बडा द्रोही है, क्योंकि जिन सूक्तोंसे उनकी प्रार्थना की गई है, उन सूक्तोंमें उसके क्रोधकी भीति और उसके शस्त्रोंका डर व्यक्त हुआ है। ..... परंतु वह राक्षसके समान अत्याचारी नहीं है। वह कष्टोंसे न केवल बचाता है, परंतु आशीर्वाद भी देता है। उसकी आरोग्यवर्धनकी शक्तियोंका वर्णन आया है और उसके पास हजारों दवाइयां हैं और वह वैद्योंमें बडा वैद्य है ... ... । '

' रुद्रके द्वारा जिस पांचभौतिक घटनाका वर्णन हुआ है, वह घटना स्पष्ट रीतिसे ज्ञात नहीं होती। परंतु यह संभव है कि उसके स्वभावके नीचे जो पांचभौतिक घटना है, वह बहुधा तूफानी अवस्था होगी ..... '

(वैदिक रीडर, पृ. ५६-५७)

युरोपियन पंडितोंकी ये ही संमतियां हैं। अन्य अनेक पंडितोंने रुद्र देवताके विषयपर बहुतसा लिखा है, परंतु उसका मुख्य अंश उक्त संमतियोंमें हैं। इसलिये और अधिक संमतियां न देता हुआ मैं इनकी ही समालोचना करता हूं। उक्त संमतियां देखनेसे निम्न मत प्रतीत होते हैं—

(१) रुद्रका दर्जा बहुत नीचे है, क्योंकि उसके लिये थोडे सूक्त हैं।

(२) उसके अवयवोंका और रंगरूपका वर्णन होनेसे वह साकार है।

(३) धनुष्यबाणका वर्णन होनेसे वह शस्त्रधारी साकार है।

(४) रुद्र मरुतोंका पिता है और पृश्निनामक गायसे मरुतोंकी उत्पत्ति हुई है।

(५) रुद्र देव क्रूर, द्रोही, भयानक है, परंतु राक्षसके समान अत्याचारी नहीं है।

(६) वह उच्च, श्रेष्ठ, सर्वशक्तिमान्, चपल, न दबनेवाला, सबसे प्रबल, तेजस्वी, सर्वज्ञ, दाता, मंगलमय और संतुष्ट है। वह सब जगत्का पिता और राजा है।

(७) यह आरोग्यदाता और रोग दूर करनेवाला है।

(८) रुद्रके वर्णनके बीचमें जो नैसर्गिक घटना है, वह गुप्त है, उसका पता नहीं लगता। परंतु वह घटना बहुधा तूफानकी हवा होगी।

(९) वह बैल और दिव्य सुवर कहा गया है।

(१०) रुद्र मेघस्थानकी बिजुली है।

अब हम रुद्रसूक्तका थोडासा विचार करते हैं—

पौराणिक रुद्र और वैदिक रुद्र।

पुराणोंमें आया हुआ रुद्रका वर्णन और वेदका रुद्रका वर्णन कई अंशोंमें भिन्न है। देखिए—

एष ते रुद्र भागः सह स्वस्राऽम्बिकया तं जुषस्व स्वाहा। एष ते रुद्र भाग आखुस्ते पशुः॥ (यजु० ३।५७)

' हे रुद्र! यह तेरा भाग है। अपनी बहन अंबिकाके साथ उसका सेवन करो। यह तेरा भाग है और चूहा तेरा पशु है। '

यहां इतना ही बताना है कि वेदमें अंबिका रुद्रदेवकी बहन कही है, परंतु पुराणोंमें उसकी धर्मपत्नी कही है। तथा रुद्रका पशु चूहा इस मंत्रमें बताया है। परंतु पुराणोंमें चूहा गणपतिका पशु कहा है। यह भेद देखने योग्य है। तथा—

भवारुद्रौ सयुजा संविदानावुभावुग्रौ चरतो वीर्याय। ताभ्यां नमो यतमस्यां दिशीतः॥

(अथर्व. ११।२।१४)

' भव और शर्व ये दोनों (सयुजा) साथ रहनेवाले मित्र, (संविदानौ) उत्तम ज्ञानवाले हैं। (उभौ उग्रौ) दोनों प्रतापी हैं, वे (वीर्याय चरतः) वे पराक्रम करनेके लिये चलते हैं। (यतमस्यां दिशि) जिस किसी दिशामें वे होंगे, उनको हमारा नमस्कार है। '

इससे ' भव और शर्व ' ये परस्पर भिन्न हैं, परंतु साथ रहनेवाले और बडा पराक्रम करनेवाले हैं, ऐसा पता लगता है। पुराणमें ये दोनों शब्द एक ही रुद्रके लिये आये हैं।

' भव ' का अर्थ ' उत्पन्नकर्ता ' है और ' शर्व ' का अर्थ ' प्रलय करनेवाला ' है। परमात्मामें ये दोनों गुण होनेसे वहां इनकी भिन्नता लुप्त होती है, ऐसा भी माना जा सकता है। इसलिये यह भिन्नत्व और एकत्व विशेष विचारसे सोचना चाहिए।

रुद्रका शरीर ।

शिवपुराणमें निम्न श्लोक ' रौद्री तनुः ' अर्थात् रुद्रके शरीर-के विषयमें आते हैं, रुद्रका विचार करनेके समय इसका भी विचार करना उचित है—

**अग्निरित्युच्यते रौद्री घोरा या तैजसी तनुः ।
सोमः शाक्तोऽमृतमयः शक्तेः शांतिकरी तनुः॥३॥
विविधा तेजसे वृत्तिः सूर्यात्मा च जलात्मिका।
तथैव रसवृत्तिश्च सोमात्मा च जलात्मिका ॥४॥
वैद्युतादिमयं तेजः मधुरादिमयो रसः ।
अग्नेरमृतनिष्पत्तिरमृताद्ग्निरेधते ॥ ५ ॥**

' अग्नितत्त्वको रुद्रका भयानक तैजस् शरीर कहते हैं । तथा जलमय सोमतत्त्वको शक्तिका-(रुद्रपत्नी)-शांतिकारक शरीर कहते हैं । तेजके तत्त्व अनेक प्रकारके हैं तथा जलके तत्त्व भी विविध हैं । विद्युत् आदि तेज हैं और मधुर आदि रस हैं । अग्नि से जलकी उत्पत्ति और जलसे अग्निका प्रकाश होता है । ' इस प्रकार सब जगत् ' तैजस् उग्र शक्तिके साथ जलात्मक शांत शक्तिके वास्तव्य ' से होता है ।

उक्त वर्णनका तात्पर्य इतना ही है कि, इस जगत्में दो शक्तियां हैं, (१) एक तेजस शक्ति गति उत्पन्न करनेवाली है; (२) दूसरी शांति करनेवाली एक शक्ति है । इन दो शक्तियोंसे यह जगत् चल रहा है । दोनों शक्तियां कार्य कर रहीं हैं । पहिली रुद्र शक्ति है और दूसरी रुद्रकी धर्मपत्नी है । इसलिये इन को जगत् के माता पिता कहते हैं ।

रुद्र	अंबिका
महादेव	पार्वती
अग्नि	जल
सूर्य	चंद्र
अग्नि	सोम

इत्यादि शब्दोंसे उक्त आशयका पता लग सकता है । आशा है कि इस विधानका भी पाठक विचार करेंगे ।

खोजका विषय ।

' रुद्र ' देवताका परिचय देनेके लिये बहुतसा रुद्रविषयक ज्ञान इस निबंधमें एकत्रित किया है । अभी बहुतसे बातोंका संशोधन करना है । आशा है कि पाठक इन बातोंका विचार करेंगे और रुद्रत्वका निश्चय करनेके लिये अन्य ग्रंथोंका संशोधन करके अधिक ज्ञान प्रकाशित करेंगे ।

रुद्रदेवताका यजुर्वेदोक्त विश्वरूप ।

यह रुद्रसूक्त यजुर्वेद-संहिता में है । वाजसनेयी संहिता का १६ वां अध्याय; काण्वसंहिताका १७ वां अध्याय; मैत्रायणी संहिताका काण्ड २, प्रपाठक ९; काठक संहिताका १७,१३-१४; कपिष्ठल कठ संहिता का २७,३-४; तैत्तिरीय संहिताका कां. ७।५।४-५ रुद्रदेवता के वर्णन के लिये ही प्रसिद्ध हैं । जो सूक्त हम यहां आज विचार करनेके लिये लेना चाहते हैं, वह इतनी संहिताओं में प्रमाणत्वेन विद्यमान है । इस अध्याय में रुद्रदेवताका बडा विस्तृत वर्णन है ।

यहां विचार करनेके लिये हम वा० यजु० अ० १६ के १७-४६ और ५४ ये ३१ मंत्र लेते हैं ।

यहां कई रुद्रों के नाम गिनाये हैं । इन मन्त्रों में नाम ही नाम गिनाये हैं । इन नामों के हम नीचे वर्ग करके बता देते हैं, जिन से पाठकों को पता लगेगा कि, वे सब रुद्र किन किन वर्गों में संमिलित होने योग्य हैं । इन में से जो मानवों में संमिलित होनेयोग्य हैं, उन के वर्ग वे हैं ।

रुद्र सूक्तमें रुद्रके अनेक नाम दिये हैं । वे नाम योंही दिये नहीं हैं । इसका कारण महत्वपूर्ण है । किसी अन्य देवताके इतने नाम वेदमें दिये नहीं हैं, केवल एक रुद्र देवके ही अनेक नाम दिये हैं । प्रायः प्रत्येक जातीके नाम यहां आये हैं । अर्थात् प्रत्येक जातीमें रुद्र है ।

ऊपर सायन, महीधर, उवट और दयानन्दके भाष्य दिये हैं । उनमें इन भाष्यकारोंने जो रुद्रके अर्थ दिये हैं वे प्रायः एक जैसे ही हैं देखिये—

सायण भाष्य—	**स्वामी दयानन्द भाष्य-**
रुद्रः परमेश्वरः	रुद्रः परमेश्वरः
रुद्रः प्राणरूपेण वर्तमानः	रुद्रः प्राणः
रुद्रः शूरभटः	रुद्रः शूरवीरः
रुद्रः रोदयिता	कुपथ्यकारिणा रोदयिता रुद्रः
रुद्रियं सुखं	
रुद्रियं भेषजं	सर्वरोगदोषनिवारकः रुद्रः
	राजवैद्यः रुद्रः

रुद्रः संहर्ता देवः
रौति उपदिशति इति रुद्रः उपदेशकः रुद्रः
जगत्स्रष्टा रुद्रः
रुद्रः हिंसकः
रुद्रः ज्वराभिमानी देवः
रुद्रः रोदकः

उवट भाष्य—

रुद्रः स्तोता
रुद्र रुग्णः
रुद्रः धीरः

महीधर भाष्य—

रुद्रः शिवः शंकरः
रुद्रः क्रूरः
रुद्रः दुःखनाशकः रुद्रः दुःखनिवारकः
रुद्रः शत्रुरोदयिता
रुद्रः रुतं ज्ञानं ददाति सत्योपदेशान् राति इति रुद्रः

इस तरह सब भाष्य रुद्रके स्वरूपके विषयमें समान संमति ही रखते हैं। स्वामी दयानन्दजीके भाष्यमें जो विशेष अर्थ दिये हैं वे ये हैं—

रुद्र दुःखनिवारक। दुष्टोंको भयंकर। दुष्ट दण्डक। रोगोंका निवारक। रोगोंका नाशक। अधीतविद्य विद्वान्। सभाध्यक्ष। न्यायाधीश। सेनापति। वायु।

ये अर्थ देखनेसे स्पष्ट दीखता है कि सब भाष्यकारोंकी संमति रुद्रके विषयमें समान है। ऋषि दयानंदजीके भाष्यमें अधिक स्पष्टता है। परंतु भावार्थमें सबकी समानता है।

ये भाष्यकार मानवोंमें गुरु, उपदेशक, प्रचारक, व्याख्याता आदिके रूपोंमें रुद्रके रूप देखते हैं। इसलिये परमेश्वरके रूपमें रुद्र एक ही अकेला एक है, परंतु सेनापति, शूरवीर, सैनिक, वैद्य, गुरु, उपदेशक आदिके रूपोंमें रुद्र अनेक हैं। सहस्रोंकी संख्यामें ये रुद्र हैं। इसीलिये वेदमें रुद्र एक ही है ऐसा कहा है और अनेक हैं ऐसा भी कहा है। यह रुद्रोंका एकत्व और अनेकत्व सत्य है और अनुभवमें आनेवाला है।

अब मानवरूपोंमें रुद्र कैसे हैं यह देखने योग्य विषय है। अगले व्याख्यानमें इसीका विचार किया जायगा।

पाठक यहां देखें कि यह देवतास्वरूप निश्चय करना कितना सूक्ष्म विचारका प्रश्न है। यह सहज नहीं हो सकता। वेदमंत्रोंमें जितने रुद्र कहे हैं, उन सबोंको क्रमवार रखकर उन सबका विचार करके निश्चय करना चाहिये कि ये रुद्र हैं। सुख देनेवाला भी रुद्र है और दुःख देनेवाला भी रुद्र है। रोग उत्पन्न करनेवाला जैसा रुद्र है वैसा रोगोंको हटानेवाला वैद्यराज भी रुद्र ही है। रक्षक जैसा रुद्र है, वैसा संहारक भी रुद्र है। परस्पर विरोधी रुद्रके रूप होनेके कारण विना विचार किये रुद्रका स्वरूप ठीक तरह ध्यानमें नहीं आ सकता। अब मानवरूपमें रुद्रोंका दर्शन कीजिये। यह स्वरूप अगले व्याख्यानमें दर्शाया है।

रुद्रदेवताके संबन्धमें

प्रश्न

★

१ रुद्रदेवताके संबन्धमें निरुक्तकार क्या कहते हैं ?

२ रुद्र एक ही है या अनेक रुद्र हैं ? रुद्र एक भी है और अनेक भी हैं यह किस तरह सिद्ध हो सकता है ?

३ रुद्र एक है इसके प्रमाणवचन अर्थके साथ लिखिये ।

४ रुद्र अनेक हैं इस विषयमें मंत्रोंके प्रमाण दें ।

५ सर्वव्यापक रुद्र है इसका क्या प्रमाण है। सर्वव्यापक देव अनेक हो सकते हैं वा नहीं ?

६ जगत्का पिता रुद्र है इसका प्रमाणवचन अर्थके साथ दें ।

७ सब सृष्टीका एक स्वामी रुद्र है इसका प्रमाणवचन कौनसा है ?

८ गुहामें रहनेवाला रुद्र कौनसा है ? अपने अन्तःकरणमें रुद्र है इसका प्रमाण कौनसा है ?

९ अनेक रुद्रोंमें व्यापक एक रुद्र है यह प्रमाणवचनसे सिद्ध करो ।

१० अनेक प्राणी, मर्त्य मानव, रुद्र हैं, यह सिद्ध करनेके लिये प्रमाणवचन अर्थके साथ दें ।

११ रुद्रके पुत्र मरुत् हैं यह प्रमाणसे सिद्ध करो ।

१२ रुद्रके पुत्र मरुत् प्रथम मनुष्य थे, पश्चात् सुकृतसे अमर हो गये यह कैसा हुआ सिद्ध कीजिये ।

१३ मानव समाजका उल्लेख वेदमें जिन पदोंसे होता है वे पांच पद कमसे कम दें कि जिससे 'सार्वजनिक भाव' वेदमें है इसका पता लग जाय ।

१४ रुद्र देवका कार्य क्या है ? इसके यौगिक अर्थ बताकर उनसे क्या भाव निकलता है वह बताइये ।

१५ 'रुद्र' पदके अच्छे सौम्य और भयानक अर्थ लिखिये ।